रीति-रिवाज़ों के नाम पर

सुनीता ठाकुर

समाज में पितृसत्ता जितनी पुरानी है उतना ही पुराना है नारी-शोषण का इतिहास। हमने उन्हें अधिकार दिए तो उन्हें आदत ही हो गई राज करने की। पितृसत्तात्मक समाज में औरत पर नियंत्रण के अलग-अलग रूप हैं– रूप अनेक पर लक्ष्य सबका एक कि कैसे औरत को दबाकर रखा जा सके। एक भय कि कहीं हम ताक़तवर न हो बैठें–इसलिए बहाने गढ़ लिए गए हम पर काबू पाने के लिए–कभी धर्म के नाम पर, कभी रीति-रिवाज़ों के नाम पर, कभी सामाजिक मर्यादा के नाम पर। तमाम बंधनों में बंधकर भी हम समझ पाते कि यह सब हमारी महानता नहीं। हमारे शोषण का ही रूप है।

मोटे तौर पर देखें तो चार शक्तियां हैं औरत की–

1. उसकी यौनिक शक्ति
2. उसकी प्रजनन शक्ति
3. उसकी काम करने की अनन्त क्षमता-उसका श्रम।
4. उसकी आज़ादी–

अगर हमारी ये चारों क्षमताएं पूरी आज़ादी से फलें-फूलें तो कहीं ज्यादा सुखी जीवन हम जी सकते हैं पर हमारी इन्हीं क्षमताओं पर रोक लगाई गई–अलग-अलग नाम-रूपों में।

यौनिक शक्ति पर नियंत्रण

कुदरत ने औरत को अपनी नियामतों से संवारा है–वह खुद में पूर्ण व्यक्तित्व है। उसका शरीर सृष्टि की तमाम क्षमताओं को समेटे है–जितना सत्य और जितना सुन्दर हम सोच सकते हैं वो

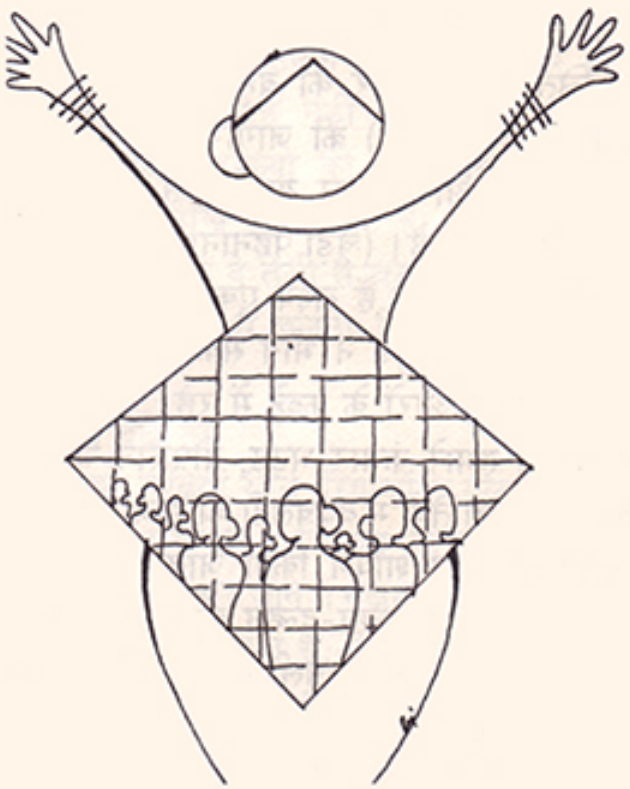

हमारे शरीर में ही समाया है–और यह सच गले नहीं उतरता हमारे मर्दाना समाज को–लिहाजा–'सुन्नत' जैसी प्रथाएं गढ़ ली जाती हैं कि उसे अपने ही शरीर की सुखद अनुभूतियों से महरूम कर दिया जाए। अफ्रीका और मध्य एशिया के देशों में फैली है यह प्रथा-औरत की भग्नाशा को कांच के टुकड़े या किसी ब्लेड या चाकू से काट देते हैं। पेशाब का रास्ता और माहवारी के लिए

जगह छोड़कर सिल दिया जाता है। अनुमान है कि लगभग बीस लाख लड़कियां हर साल इस शोषण का शिकार होती है। इस समय लगभग 12 करोड़ महिलाएं (विश्व में) इस शोषण को झेल रही हैं। औरत की यौनिकता, काम इच्छा को दबाने के लिए यह प्रथा बनाई गई है। माना जाता है कि इससे औरत की सुन्दरता भी बढ़ती है और उसकी इज़्ज़त की भी रक्षा की जा सकती है।

गुजरात के कई गांव में आज भी द्रोपदी प्रथा प्रचलित है। परिवार की बहू परिवार के सभी जवान मर्द (भाइयों) की जागीर बना दी जाती है। विधवा औरत देवर या जेठ से शादी करने को विवश होती है। (चूड़ी पहनाना, चादर डालना आदि) रूप तमाम हैं लक्ष्य एक वह आज़ादी से आने शरीर का सुख न भोग सके। हमेशा किसी और के लिए औरों के कब्ज़े में रहे।

यही नहीं हमारे कंजार भट्ट, गोपालन जाति व आदिवासी जातियों में बदचलनी का इल्जाम लगाकर औरत का यौन शोषण किया जाता है। कंजार भट्ट समुदाय में दूल्हा-दुल्हन कोरी सफेद चादर पर संभोग करते हैं। अगली सुबह कपड़े को देखा जाता है। यदि उस पर खून के दाग नज़र न आएं तो मान लिया जाता है कि लड़की बदचलन है और दूल्हा उसे छोड़ देता है। गोपालन जाति में बदचलनी के इल्जाम से घिरी-औरत सामाजिक अपमान और बहिष्कार का शिकार होती है।

ध्यान देने की बात है कि यौनिकता, शरीर और सुन्दरता हमारी निजी बातें होकर भी दूसरों के द्वारा नियंत्रित होती हैं। क्यों? प्रायः देखा जाता है कि आपसी द्वेष, बदले की भावना और दुश्मनी से भी औरत इन तमाम यौन शोषणों का शिकार होती हैं। मर्दों की बात न मानने की सजा बदचलनी बेहयाई के इल्जामों में होती है। बहुत बड़ी सच्चाई है कि जब मर्दानगी का ज़ोर मर्दों पर नहीं चलता तो उसका शिकार औरत होती है। रूप किसी न किसी बहाने से उसका यौन-शोषण-शारीरिक शोषण।

प्रजनन शक्ति पर नियंत्रण

औरत की सबसे बड़ी शक्ति है उसकी बच्चा जनने की क्षमता। माहवारी-चक्र एक सहज मासिक प्रक्रिया होती है जो औरत की उर्वरा शक्ति का

प्रतीक है। माहवारी चक्र के दौरान या जचकी होने के सवा महीने तक औरत की छाया से भी दूर रहने जैसी मान्यताएं उसके आत्मविश्वास को कमजोर करती हैं। उससे अछूतों जैसा व्यवहार कर उसमें मानसिक तौर पर हीनता का भाव भर दिया जाता है।

यही नहीं लड़की पैदा होने पर उसी को दोषी ठहराना, बांझ जैसे आरोप लगाकर उसे बराबर प्रताड़ित किया जाता है। लड़की पैदा होती है तो लड़के की मांग पर उसे बार-बार गर्भ धारण करना पड़ता है और यहां तक कि गर्भपात जैसी पीड़ा को भी झेलना पड़ता है—या कहें कि वह झेलती है, क्योंकि और कोई रास्ता नज़र नहीं आता।

श्रम पर नियंत्रण

गृहलक्ष्मी, गृहस्वामिनी जैसी उपाधियों से लादकर घर की चारदीवारी में बैठा दी जाती हैं हम। तुम नाजुक हो, सुन्दर हो, घर की शोभा हो—घर संभालो, सजो-संवरो बस यही तुम्हारा धर्म है—बचपन से ऐसे संस्कार जाने-अनजाने मन में रोप दिए जाते हैं और ताउम्र औरत होने की कल्पनाएं मन में पाले हम सब झेलती रहती हैं। घर के काम की कोई कीमत नहीं होती। वह तो औरत की ज़िम्मेदारी है और घर की इस ज़िम्मेदारी के साथ बाहर जाकर भी काम करने वाली औरतों को दोहरी मार झेलनी पड़ती है। कितना भी पढ़ लिख जाओ, कितना भी पैसा कमा लो पर घर के काम से कोई निजात नहीं—वह तो उसका धर्म है—और धर्म का कोई मूल्य नहीं होता।

घर-बाहर की ज़िम्मेदारी निभाओ, बच्चे पैदाकर खानदान का नाम बढ़ाओ क्योंकि यही तुम्हारा धर्म है और इस धर्म पालन की चक्की में परिवार और समाज के पाटों के बीच हमारा वजूद पिसता रहता है— तमाम व्रत, उपवास, पूजा-पाठ पति की उम्र के लिए, पुत्र की कामना, उसकी रक्षा के लिए करते हम भूल जाते हैं कि हम कहां हैं—एक क्षण सिर्फ़ अपने लिए, अपनी तरह, अपने अस्तित्व को पूरी तरह पाने की, प्यार करने की कामना में ताउम्र कोल्हू के बैल की तरह खटती रहती हैं हम, क्योंकि यही परम्परा है।

चलने फिरने की आज़ादी पर रोक

चीन जैसे देशों में प्रथा है लड़कियों के पैर बांधे जाने की। लड़कियों के पांव में बचपन में ही लोहे के छोटे-छोटे जूते पहना दिए जाते हैं—इस विश्वास से कि उनके पांव सुन्दर और छोटे हों—पर सच्चाई यह नहीं है—पांव बांधने की पीड़ा ताउम्र लड़कियों को धीरे-धीरे संभलकर चलने की सीख दे जाती है कि वे अपनी सीमा में रहें, कि वे तेजी से चलना, बढ़ना अपनी मर्ज़ी से आज़ादी से चलना-फिरना न सीखें।

ध्यान से देखें तो

प्रायः सभी रूढ़ियों रीति-रिवाज़ों के मूल में धारणा एक ही काम करती है कि हम आज़ादी से अपनी तरह, अपने बूते पर जीने में सक्षम न हो सकें—औरत जब तक शरीर से मन से, पैसे से मर्दों की गुलाम रहेगी तभी तक उनकी पूछ हो सकती है। अपनी इसी मंशा के तहत तमाम षड़यंत्र रचा जाता है और अपनी महानता के मोहपाश में हम सब भूल जाते हैं। मां-बहन, पत्नी, बेटी, बहू बनने के फेर में भूल जाती हैं एक औरत की तरह जीना।

सब कुछ समझबूझकर भी चुप रह जाती हैं—भाग्य के नाम पर कि हमारा भी उद्धार करने वाला कोई आएगा। हमें याद रखना होगा कि अहिल्या पत्थर न बनती यदि उसने गौतम को उसकी ईमानदारी पर इल्ज़ाम की सजा दी होती। सीता

अग्नि परीक्षा या वनवास का शिकार न होती यदि उसने राम से पवित्र होने का सबूत मांगा होता। हम इसीलिए हर शोषण का शिकार होती हैं कि नारीत्व, शर्म, लोकलाज के भय से चुप रहती हैं। हम भूल क्यों जाते हैं कि अन्याय का विरोध करने के लिए ही प्रकृति ने हमें ज़ुबान दी है, ग़लत को पहचानने के लिए ही आंखें दी हैं और अपने हक की बात सुनने के लिए ही कान दिए हैं। हमें दिमाग दिया है कि हम सोचें क्या सही है और क्या गलत।

किसी को क्या अधिकार है कि ज़मीन-जायदाद हो या पारिवारिक क्लेश, हमें आपसी दुश्मनी का शिकार बनाए—किसी को हम ये हक दें ही क्यों कि वह हमारे देवी या डायन होने का फैसला करे। हम भूल क्यों जाते हैं कि पुरुष को जीवन, जीने की शक्ति और जीने का हक हमने ही दिया है। वह हमारी ताकत, हमारे समर्पण, हमारे विश्वासों के बलबूतों पर बढ़ता है—तो फ़िर हम बेचारगी क्यों लादें। अन्याय करने वाले से सहने वाला ज़्यादा गुनहगार होता है। द्रोपदी का चीरहरण न हुआ होता यदि अपनी चौखट लांघने वाले दुश्शासन की टांगे उसने तोड़ दी होती। शक्ति हमारी अनन्त है, पर हम भूल चुके हैं कि उसका उपयोग करने का अधिकार और क्षमता भी हममें हैं। यह क्षमता संगठन में छिपी है—यह अधिकार हमें विरोध करके ही मिल सकता है क्योंकि मांगने से कुछ मिलता नहीं है और छीनने से बहुत कुछ मिल सकता है। □